से सुजानसिंह पार्क वाले घर में आए तो बाकायदा पत्र लिखकर सूचना दी। साथ दो फोन नं. दिये, आग्रह से लिखा दिल्ली आओ तो जरूर मिलना। आत्मीयता से सराबोर इंसान उनमें हिलोरें लेता था। आज भीष्म साहनी हमारे बीच नहीं है। उनके जन्म और मृत्यु के बीच पूरी एक शताब्दी फैली हुई है। जिसमें गुलाम भारत और स्वतंत्र भारत का इतिहास भी है। साहित्य के दोनों पक्ष स्वतंत्रता के पूर्व तथा पश्चात मौजूद हैं। भीष्मजी इन दोनों बिन्दुओं के बीच समर्थ लेखक रहे हैं। प्रेमचंद की जमीन को ज्यादा उर्वरक बनाने में भीष्म साहनी का बेहद विनम्र लेकिन दृढ़ सार्थक योगदान रहा है।

भीष्म जी की नम्रता उनके व्यक्तित्व का बेहद सुदृढ़ पक्ष था। वे अपने विचारों के दायरे से किसी को नकारते नहीं थे। वे उसे सहमत करते यदि सहमति न भी हो तो संवाद का मार्ग बनाए रखते। यह उनके भाषणों, लेखों, साक्षात्कारों में सहज देखा जा सकता है। उन्होंने कहा था ''लेखक का संवेदन अपने समय के यथार्थ को महसूस करना और आंकना है। उसके अंतर्द्वन्द्व और अन्तर्विरोध के प्रति सचेत होना है। इसी दृष्टि से उसकी पकड़ समाज के भीतर चलने वाले संघर्ष पर ज्यादा मजबूत होती है और परिवर्तन की दिशा का भी उसे भास होने लगता है। इसी के बल पर यह (लेखक) राजनीति से आगे होता है पीछे नहीं।'' (केवल गोस्वामी को दिये साक्षात्कार से- 1982) 'चीफ की दावत' का मध्यवर्ग, उसकी स्थिति का चित्रण, 'बसंती' की वह खुरदरी जमीन, कबिरा खड़ा बाजार में, निशाचर, भटकती राख और भी अन्य रचनाओं में भीष्मजी ने अपने भारतीय समाज, उसके संघर्ष और जीवन मूल्यों की गहरी पड़ताल करते हुए गहरी मुठभेड़ भी की। भीष्म जी ने गुलामी से स्वतंत्रता तक एक सचेत इंसान की तरह एक विचार, एक व्यापक सपना देखा था कि हम सौहार्द्रपूर्ण, मूल्य आधारित, समतामूलक, समाज का निर्माण कर सकें जहां बराबरी और हंसी मुस्कान से भरे घर-आंगन हो, गरिमा के साथ 'स्त्री-पुरुष' जी सके, विश्व सौहार्द्र में उसके विकास में भारत अपना बहुमूल्य योगदान कर सके। इस सपने को साकार करने और उस नई दुनिया बनाने का सपना आज भी जीवित है- वह सपना न थका है न मरा है... 'भीष्म साहनी', जीवित हैं- हमारे साथ हैं। फिर भी उन्हें याद करके उनके पत्र पढ़ते हुए, आज मेरा दिल भारी है, आंखें नम हैं...। ■